UGC Approved Journal
Research Link

Since March 2002

An International, Registered & Referred Monthly Journal :
Hindi Literature
Research Link - 165, Vol - XVI (10), December - 2017, Page No. 115-117
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

संत कवयित्रियों की सामाजिक चेतना

प्रस्तुत शोधपत्र संत कवयित्रियों की सामाजिक चेतना के अध्ययन से सम्बंधित है। संत कवयित्रियों की बानी में सामाजिक चेतना मुख्य रुप से देखने को मिली है। साहित्य और समाज का बड़ा गहरा सम्बंध है, क्योंकि दोनों के केन्द्र में मानव है। मानव ही समाज को स्वरुपित करता है और वही साहित्य की शब्द मूर्तियाँ रचता है। निर्गुण संत कवयित्रियों ने समाज के अंतर्गत जो अनेक प्रकार के आचारिक और मानसिक विकार व्याप्त हैं, उन्हीं को निर्मूल करके आदर्श समाज और आदर्श मानव की संकल्पना और संस्थापना ही संत कवयित्रियों का काम्य रहा है।

प्रिया भसीन

भारत की आध्यात्मिक परम्परा बहुत पुरानी है। आत्मा, परमात्मा, जगत, जीव, साधना तथा मोक्ष से संबंधित चिन्तन इस धरती का अपना चिन्तन है। ऐसी सहज और स्वाभाविक चिन्तन जैसे सूर्य का प्रकाश तथा वायु का प्रवाह प्राकृत्तिक रूप से मानव को प्राप्त है वैसे भी आध्यात्मिक चिन्तन का विकास भारतीय सांस्कृतिक चेतना का एक ऐसा भाव है, जिसने भारतीय मनीषा का सुदीर्घ परम्परा की विश्व–मानवता के सम्मुख मानवीय कल्याण पथ पर अग्रसरता के लिए प्रस्तुत किया है। यह चिन्तन धारा इस क्षेत्र के लोक जीवन के साथ जुड़कर ऐसा रूप प्रस्तुत करती है, जिसे जनहित भक्ति के नाम से जाना जाता है। भक्ति का आभास भारतीय चिन्तन में ऋग्वेद के वरूण सूक्त व अन्य ऋग्वेद में मिलता है।

भक्ति की विकास यात्रा में प्राचीन भागवत धर्म, दक्षिण भक्ति आंदोलन परम्परा से प्राप्त संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंश का भक्ति साहित्य, लोक परम्परा का विशेष योगदान रहा है। वैदिक काल से ही नवधा (कीर्त्तन, पादसेवा, अर्चन, श्रवण, नाम– स्मरण, वंदन आदि) भक्ति का सूत्र मितला है। इन्हीं का प्रसार आगे पौराणिक युग को लांघते हुए भारतीय साहित्य की मध्यकालीन परम्परा को प्राप्त होता है। इस विकास में उपासना के विविध रूप अवतारवाद की संकल्पना और फिर निर्गुण सगुण रूपों का क्रमशः विकास होता गया। भारतीय परम्परा के मध्ययुग में यह धारा एक जन आंदोलन के रूप में दिखाई देती है जिसने पूर्व प्रचलित धर्म पद्धति में परिवर्तन व परिवर्द्धन दिखाई देता है। इस धारा की तीव्रता पौराणिक समय की वर्ण व्यवस्था की कठोरता का विरोध करती है। इस धारा की तीव्रता पौराणिक समय की वर्ण व्यवस्था की कठोरता का विरोध करती है और अवतारवाद की परम्परा की स्थूलता का विरोध करते हुए तद्जनित विकृतियों का खण्डन करते हुए सूक्ष्म चिंतन द्वारा मानव के मंगलमय जीवन के प्रति जागरूक करती दिखाई देती है। इस रूप में एक आंदोलन जो भारत के दक्षिण में आलवारों के सात्विक भावों से चला। उसे ही भारत के पश्चिम के महानुभावों व वाराकरी भावुकता से आगे बढ़ाते हुए निर्गुण संत के रूप में सारे भारतीय क्षेत्र में मान्यता प्राप्त हुई थी। वास्तव में देखा जाए तो इनका आगमन ही समाज–सुधार के लिए हुआ था। संत कवयित्रियों ने समाज में प्रचलित प्रथाओं, परम्पराओं, रीति–रिवाजों, उत्सवों और धार्मिक अंधविश्वासों का चित्रण किया हैं।

पर्दा प्रथा : सत कवयित्रियों ने समाज में प्रचलित पर्दा प्रथा की धार्मिक अभिव्यंजना की है। उस समय नारी घर की चार दीवारी में ही कैद थी। उसे बाहर नहीं निकाला जाता था। नारी को सिर ढ़ंक कर ही या घूँघट डालकर ही बाहर जाने की प्रथा प्रचलित थी। संत कवयित्री फूलीबाई की निम्न पंक्तियाँ इस का प्रत्यक्ष उदाहरण है :

ये (जद) कुतीया होसौ, लाजकाण सब कुल खोसौ।
आगे पीछे पड़दा नाहीं, तब ओ गूँगट कहा रही।। (1)

संत कवयित्री गवरीबाई ने भी अपनी बानी में पर्दा प्रथा की भर्त्सना की है। साथ ही पर्दा प्रथा का परित्याग कर ज्ञान रूपी गुलेल और फाग खेलने की बात करती है और इस प्रथा का उल्लंघन करने का भी उपदेश देती है।

गबरी दिया परदा कूँ त्याग, ग्यान गुलाले खेलते फाग। (2)

जाति प्रथा : संतों के समय जाति–व्यवस्था ने बड़ा विकराल आकार ले लिया था। चूँकि संत–कवि मानवधर्मा थे, इसलिए उन्होंने जाति व्यवस्था को नकार किया। वैसे भी इस युग तक आते–आते जातियों और उपजातियों की बहुसंख्या के कारण वर्णता और आश्रम–व्यवस्था विनष्ट–सी हो गयी थी। लोग अपने मार्ग से विलग हो गए थे, इसलिए संत कवयित्रियों ने भी अपनी

भारत चौक, खाई रोड़, कुमार की गली, फिरोजपुर शहर (पंजाब)

बानी में उनके प्रति गम्भीर आक्रोश व्यक्त किया है, क्योंकि संत कवयित्रियों ने भी जातिवाद की प्रताडना को झेला था। संत कवयित्री मुक्ताबाई ने सजातीय ब्राह्मणों की प्रताडना को झेला था, जिसका वर्णन उन्होंने अपने काव्य में भी किया :

ब्रामण कहै सुनौ हो भाई, तुम जाणाों हमकूं ठाम नाही।
सब विप्रा मेल ऐह विचारी, याकौ कारज देवौ बिगारी।[3]

संत कवयित्री सहजोबाई ने भी जातिवाद की भर्त्सना इन पंक्तियों में व्यक्त की है :

जो आवै सतसंग में, जाति वरन कुल खोय।
सहजो मैल कुचैल जल, मिलै सु गंगा होय।। [4]

दान प्रथा : संत कवयित्रियों के काल में दान देने एवं लेने की प्रथा भी प्रचलित थी। इनका निरूपण उनकी बानी में देखने को मिलता है। संत कवयित्रियां प्रभु को अपना प्रियतम मानते हुए भक्ति का दान मांगती है। संत कवयित्री गवरीबाई की बानी का एक पद देखिए :

मैं मांगन तुम दान के करता, दीजे भक्ति का दान।। [5]

निर्गुन संत कवयित्रियाँ दान प्रथा का प्रबल विरोध करते हुए मानव को कर्म करने का उपदेश देती थी। संत कवयित्री मुक्ताबाई के काव्य में दान संबंधी पद देखिए :

वेद पाठ कीना पुन दान, भक्त बिना नप्र पिछताना।[6]

संत कवयित्री सहजोबाई परमात्मा को अपना प्रियतम मानते हुए उससे भक्ति का दान मांग रही है :

और साधन परनाम करि, कर जोडूँ सिर नाथ।
यही दान मोहि दीजिए, भक्ति करूँ चितलाय।। [7]

संत कवयित्री दयाबाई ने गुरु को अपना सर्वस्व मानते हुए उससे भक्ति का दान मांग रही है :

सतगुरु सम कोय है नहीं, या जग में दातार।
देत दान उपदेश सो, करै जीव भव पार।। [8]

संत कवयित्रियों ने अपनी बानी में समाज में प्रचलित रीति रिवाजों का भी उल्लेख किया।

जन्म संबंधी रीति रिवाज : भारतीय समाज में अनेक प्रकार के जन्म संबंधी रीति–रिवाज भी प्रचलित है। संत कवयित्रियों ने गर्भाधान से लेकर जन्म तक की स्थितियों का प्रसंगानुकूल वर्णन किया है। इनकी धारणा है कि पिता के वीर्य से ही जन्म की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। स्त्री के रज और पुरुष के वीर्य से भ्रूण की रचना होती है और भ्रूण नौ महीने तक गर्भ में रहकर विकसित होता है। उसके बाद वह गर्भ से बाहर आता है। इसके बाद उसके जन्म संबंधी रीति–रिवाज किए जाते हैं। हिन्दू धर्म में पुत्र–प्राप्ति के अवसर पर भारतीय समाज में गोदान करने की रीति, वस्त्रादि भेट करने की रीति, बंधु–जनों द्वारा विविध साज–बाज के साथ गाना गाने की रीतियों का सुंदर निरूपण गवरीबाई ने अपनी बानी में किया है।

आजो, नन्दजु के द्वार भाई हरख बधाई रे,
फूली जसोदा रानी, फूले जो नन्द जानी।
फूले सब गोप गोपी आन्नद सुख पाई रे,
लखन भंडार लुटावे विप्रकु, गोदान देवे रावे,
कोयकु पटोला चीर, नौतन पंनाई रे,
दुष्ट जनों को काल, भक्त जनको रखवाल
ब्रज में करे विहार, कुंअर कनाइ रे,
मोतियन का चोक पुरावे, बंधुजन द्वारे गावे।। [9]

जनेऊ धारण करने की रीति : संत कवयित्रियों ने अपनी बानी में जनेऊ धारण करने की रीति का भी उल्लेख किया है, क्योंकि इनके समय में ब्राह्मण धर्म में जनेऊ धारण करने की रीति थी। इनका खण्डन संत कवयित्री मुक्ताबाई ने अपनी बानी में किया। इन्होंने ब्राह्मणों को फटकार लगाते हुए कहा कि :

पकडो धरम जिनेउ देवा, अब थानै ब्रामंण कर लेवा।[10]

विवाह संबंधी रीति : संत कवयित्रियों ने अपनी बानी में समाज में प्रचलित विवाह संबंधी रीति रिवाजों का भी उल्लेख किया है। संत कवयित्री सहजोबाई पुत्री के विवाह के योग्य हो जाने पर उनकी माता–पिता की चिन्ता को इन पंक्तियों में व्यक्त करती है :

बेटी ब्याह जोग घर माँही
और भूखे सब कित सू खाही।। [11]

हमारे हिन्दू समाज में लड़की के विवाह के समय माता–पिता द्वारा उपहार स्वरूप भेट देने की रीति थी, जिसे बाद में दहेज प्रथा का नाम दिया गया।

गौना संबंधी रीति : प्राचीन समय में भारतीय समाज में गौना संबंधी रीति चली आ रही है, तो फिर संत कवयित्रियों की बानी इनसे अछूत कैसे रह सकती है। हिन्दू समाज में विवाह के पश्चात् पुत्र का गौना लाया जाता है जिसका चित्रण संत कवयित्री सहजोबाई ने अपनी बानी में भी किया है। वह गौने में गाठ बांधने की रीति का वर्णन इस पंक्ति के माध्यम से करती है :

आवा गौना दुख महा, तासु की गाठ न खोल। [12]

अंतिम संस्कार की रीति : जिसका जन्म हुआ, उसकी मृत्यु निश्चित है। संत कवयित्री ने इस निश्चित मृत्यु का इस प्रकार से बोध कराया है अथवा वर्णन किया है। इन्होंने शरीर को पानी के बुलबुले के समान कहा है। संत कवियों ने तो मानव शरीर को मिट्टी का पुतला कहकर उसके अन्त समय का वर्णन किया है। इन्होंने नाना धर्मावलिम्बियों को दृष्टि में रखकर मृत्तक के मृत्यु संस्कार के तीन रूप बताये हैं– शव को जानवरों को खिला देना। संत कवयित्रियों ने इसे मानव जीवन का अंतिम सोपान माना है। संत कवयित्री गवरीबाई का मानना है कि जब हंस रूपी आत्मा इस शरीर से निकल जाएगा तो इस तन रूपी पिजरे को जला दिया जाता है।

हंसा जब उडके चले। पिंजरा दिया जलाई। [13]

श्राद्ध कर्म की रीति : हिन्दू धर्म में मानव की मृत्यु के पश्चात् पिण्ड़दान एवं श्राद्ध की रीति भी प्रचलित है। इसमें पूर्वजों के नाम की दान–दक्षिणा पण्डितों को दी जाती है। संत कवयित्री सहजोबाई की बानी में भी इस रीति का उल्लेख मिलता है :

पूजै नौ ग्रह देवता। पित्तर सती अकूत। [14]

संत कवयित्रियों ने अपनी बानी में व्रत एवं त्योहारों का भी चित्रण किया है, क्योंकि व्रत एवं त्योहार सांस्कृतिक चेतना के प्रमुख पोषक तत्व है। इनके द्वारा ही किसी देश और युग की सांस्कृतिक स्थिति का परिचय प्राप्त होता है। भारतीय जीवन में तो व्रतों और त्योहारों का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारत को यदि त्योहारो का देश कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी। भारतीय

समाज में प्रचलित अनेक पर्वों और त्योहारों का वर्णन संत काव्य में भी हुआ है। इस संदर्भ में होली, सावन और हिडोला, दीपावली, बसंत आदि की चर्चा की है।

होली : होली फाल्गुन मास की पूर्णिमा को मनाया जाने वाला त्योहार है, यह त्योहार विशेष रूप से उत्साह और उल्लास की प्रतीति करता है। होली त्योहार मनाने के पीछे एक लोककथा है। यह लोककथा प्रह्लाद से संबंधित है। संत कवयित्री सहजोबाई की बानी में होली का एक पद देखिए –

मैं तो खेल प्रभु संग होली रंग भरी।
जित देखूं तितरमि रहौ रे, सब में व्यापक है हरी।। [15]

संत कवयित्री गवरीबाई ने भी अपनी बानी में होली उत्सव का उल्लेख किया है :

होली खेले अविनाशी संग,
पांच पचीस गई है उमंग, खेलन, प्रीतम की संग।
सील साड़ी पहेनी है अंग, चतुर बजावे चंग,
अष्ट कमल ढल फूले सार, आत्मनिज करे क्रीडा अपार।
सुरत निरत धरी देखो मुजार, भ्रमर करे शब्द से गुंजार।
गोप गोपी मीली होरी गाये, जहां मनसा मेरी रही लुकाऐ।
माया, मोह, दिसे नहीं किये, जीत देख वित हरी हरी होय।
गवरी दिया परदा कू त्याग, ग्यान गुलाले खेलत हो फाग।[16]

सावन और हिडोला : सावन में हिंडोला या झूला का बड़ा महत्त्व है। झूले में झूलते हुए उत्साह और उल्लास की भावना व्यक्त की जाती है। नारी संतों ने हिंडोले का एक समारोह संगठित करते हुए माना है कि मन में लोभ ओर मोह के खम्भे पर संसार रूपी हिंडोला ड़ाला है। संपूर्ण संसार के जीवन इस हिंडोले में झूलते हैं। यद्यपि ज्ञानी सांसारिक स्थिति को समझते है, फिर भी वे इस झूले में झूलने का मोह संचरित नहीं कर पाते। संत कवयित्रियों की बानी में इसकी सुंदर अभिव्यंजना हुई है। उदाहरण के लिए गवरीबाई की बानी का एक पद देखिए :

हिंडोले आवो कनैया झुलाउ, आवो कनैया झुलाऊ।
भाव भक्ति के संग ठराऊ हांडी विवेक विचार बनाऊ।[17]

दीपावली : हिन्दू धर्म के प्रमुख त्यौहारों में से दीपावली प्रमुख त्यौहार है। यह उत्सव सिक्ख भी बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। इस दिन दीपमाला की जाती है। यह दीपों का उत्सव माना गया है। परन्तु संत कवयित्रियों ने इस उत्सव को आध्यात्मिकता से जोड़ा है। संत कवयित्री गवरीबाई की बानी का एक पद देखिए :

मरे मंदिरीए पधार्या गिरधारी रे वनमाली
मारे दशा पुरनवाली दिपक दीवाली
सुख सबे मीली खेलता रे दीवाली
माहें अखुं ज्योत अंजुवाली दिपक दीवाली।। [18]

बसन्त : बसन्त ऋतु को ऋतुराज भी कहा जाता है। इसे हरियाली एवं खुशहाली का प्रतीक माना गया है। इस दिन लोग पीली वस्तुओं का सेवन करते हैं और माँ, सरस्वती की इसी दिन पूजा भी की जाती है। यह त्यौहार सब के लिए नई चेतना स्फूर्ति एवं उमंग का संदेश लेकर आता है। इसे ऋतुराज की संज्ञा भी दी गई है। ब्रज प्रदेश में यह उत्सव पूरे उमंग एवं उत्साह के साथ मनाया जाता है। संत कवयित्री सहजोबाई की बानी में इस संदर्भ से संबंधित पद इस प्रकार है :

सो वसंत नहिं बार बार। तौ पाई मानुष देह बार।
यह अवसर विस्थान खोल। भक्ति बीज हिय धरती बोव।। [19]

धार्मिक अंधविश्वासों का खंडन : संत कवयित्रियों ने अपनी बानी में तत्कालीन समाज में प्रचलित विविध प्रकार के अंधविश्वासों का बखान अपनी बानी में किया है। क्योंकि उस समय समाज में तीर्थ–यात्रा, जादू–टोना, शकुन–अपशकुन का बहुत बोलबाला था। फिर इनकी बानी इनसे अछूती कैसे रह सकती थी।

संत कवयित्री मुक्ताबाई ने एक पद में लोकविश्वासी अंधविश्वास का खंडन करते हुए कहा है कि :

कासी जाकर मुंड मुंडायौ, बरस पांच पिछौ नहीं आयौ।।[20]

संत कवयित्री सहजोबाई यज्ञ, दान, तीर्थ तथा पूजा आदि अंधविश्वासों की भर्त्सना करते हुए कहती है कि प्रभु की भक्ति सच्चे मन से होती है और प्रभु की भक्ति करने से ही मानव मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

यज्ञ दान तीर्थ करें, पूजा भंति
अनेक मुक्ति न पावै सहजिया, बिना भक्ति हरि एक।।[21]

संत कवयित्री अक्कमहादेवी के काव्य के संदर्भ में तत्कालीन अंधविश्वासों को रेखांकित करते हुए बताया गया है कि इन्होंने अपने समय में प्रचलित कथित अंधविश्वासों तथा तान्त्रिक विधानों की भी चर्चा की हैं। इनके काव्य का अध्ययन करने के बाद यह पता चलता है कि उनके जीवनकाल में भूत, प्रेत एवं मनसा देवी की पूजा हुआ करती थी, लोगों को भूत लग जाने का भ्रम हुआ करता था तथा उन्हें राक्षस एवं प्रेम के अस्तित्व में भी विश्वास था। लोगों की यह मान्यता थी कि श्मशान में रहने वाला प्रेत या भूत मरा होने पर भी जाग उठ करता है। वे लोग मन्त्रोंच्चारण की शक्ति में पूर्ण विश्वास रखते थे और उनके द्वारा सर्प का विष दूर किया जाना निश्चित समझा जाता था। उस काल की जनता में यह भी विश्वास था कि चन्द्रगहण के समय चन्द्रमा को तथा सूर्यग्रहण के समय सूर्य को राहु ग्रस लिया करता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि निर्गुण संत कवयित्रियों ने अपने युग में व्याप्त नाना अंधविश्वासों के विविध रूप भी रूपायित हुए।

अतः संत कवयित्रियों के सामाजिक पक्ष का अध्ययन करने के पश्चात् हम यही कह सकते है कि ये कवयित्रियां समाज का जन–कल्याण करना चाहती थी और साथ ही मानव समाज को भी जन–कल्याण करने के लिए प्रेरित भी करती थी।

संदर्भ :

(1) श्री मस्त (संपा0) : गवरीकीर्त्तनमाला, कमलाशंकर गोपालशंकर भचेच, अहमदाबाद, 1937, पृ0 286, 262, 181, 228, 236, 236.

***(2)** दयाबाई, दयाबाई की बानी : दयाबोध और विनयमालिका, बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद, 1918, पृ0 3, 12.*

***(3)** राठौड, विक्रम सिंह (संपा0) : संतों एव भक्तों का जीवन चरित्र, जोधपुरः राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी, प्रथम संस्करण 2005, पृ0 232, 249, 247, 245, 244, 236.*

***(4)** सहजोबाई : सहजोबाई की बानीः सहजप्रकाश, बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद, 1913, पृ0 15, 43, 27, 43, 50, 56, 58, 59,60, 68.*

❁ ❁

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal :
Hindi Literature
Research Link - 165, Vol - XVI (10), December - 2017, Page No. 118-120
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

नैतिक मूल्यों के विकास में बाल-साहित्य की भूमिका

प्रस्तुत शोधपत्र में नैतिक मूल्यों के विकास में बाल-साहित्य की भूमिका का अध्ययन किया गया है। सच्चा बाल साहित्य वही है, जो बालकों में प्रेम, सेवा, सत्य, ईमानदारी, परदुःख कातरता, परिश्रम आदि शाश्वत मानव मूल्यों के अंकुर बाल मन में रोप सके। बच्चों में एक सहज संवेदना जगा सके, साथ ही जो बच्चों का स्वस्थ विकास करने में सहायक हो और ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ नैतिक गुणों से भी युक्त हो। एक बालक को सद्-साहित्य के माध्यम से सुसंस्कारित किया जा सकता है, क्योंकि पंचतंत्र, हितोपदेश, बृहत्कथा, मंजरीकथा, सरित सागर, जातक कथाओं आदि का उद्देश्य नैतिक मूल्यों के महत्व को प्रतिपादित करना ही है। स्वस्थ समाज की संरचना के लिए नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठ बचपन में जरुरी है। इस कार्य हेतु बाल साहित्य की भूमिका अद्वितीय व अतुलनीय है और सदैव बनी रहेगी।

रेखा मण्डलोई

प्रस्तावना :

''साहित्य में सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को स्थान देने से वे सांस्कृतिक श्रेष्ठता को जीवन्त बनाने में सहायक होते हैं। जीवन मूल्य स्थायी विश्वास होते हैं।''(1)

एक उज्ज्वल राष्ट्र की मजबूत नींव उसकी नैतिकता पर ही अवलम्बित होती है। नैतिक मूल्य हमारी संस्कार चेतना है, जो बालकों के चरित्र निर्माण की दिशा में अपनी महती भूमिका निभाते हैं। नैतिक मूल्यों का प्रारम्भिक विकास हमारे पूर्वजों द्वारा कहानियों, कविताओं, लोरियों, बाल–गीतों तथा विभिन्न प्रसंगों को माध्यम बनाकर किया जाता था। एक बालक के मस्तिष्क का लगभग 75 प्रतिशत विकास उसके जन्म से 5 वर्ष तक की अवस्था में ही हो जाता है। अतः बचपन के संस्कार ही व्यक्ति के व्यक्तित्व की आधारशिला होते हैं। वर्तमान में इसका सशक्त माध्यम बाल साहित्य ही है।

बाल साहित्य हिमालय से निकली समुद्र की धारा के रूप में प्राचीन काल से प्रवाहरत है। आज तक जितने भी महान साहित्यकार हुए हैं, उन्होंने बाल मनोविज्ञान आधारित ऐसा साहित्य सृजन किया है, जो बालकों के मनोरंजन के साथ–साथ उनके बौद्धिक व नैतिक गुणों का भी विकास कर सके। बाल साहित्य विशेषज्ञ एडगर ओसबर्न ने लिखा है– ''उन्नीसवीं सदी के उन लेखकों के हम ऋणी हैं, जिन्होंने बच्चों के लिए ऐसा लिखा जिसने पाठकों में साहस, नैतिकता, और आत्मविश्वास की भावना जगाई।''(2)

मानव जीवन में सत्य, अहिंसा, प्रेम, एकता, परोपकार, धैर्य, मधुर–वचन, सहिष्णुता आदि गुण उसके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है, जो बाल साहित्य की विविध विधाओं के द्वारा अपने विकसित रूप को प्राप्त करते हैं। कविता – बाल कविता सृजन के लिए एक लेखक को अपने बचपन में लौटना होता है, क्योंकि कोई भी रचनाकार बाल मन को तब तक अच्छी तरह नही पढ़ सकता है, जब तक कि वह बालमन का कोना–कोना न झाँक आये। उत्तम बाल कविता वही होती है, जो बालकों के आनन्द का कारण बनने के साथ–साथ उनमें नैतिकता का विकास भी करें। पराग पत्रिका के संपादक और बच्चों के यशस्वी लेखक स्व. आनन्द प्रकाश जैन ने कहा था कि ''बच्चों की कविताओं में 90 प्रतिशत आनन्द तत्व होना चाहिए। रचना–संरचना की आधारभूत आवश्यकताओं को अलग रखते हुए शेष 10 प्रतिशत भाग जो बचता है, इसे मैं ऐसा मानता हूँ कि यह रचनाकार का वह हिस्सा है, जिसे वह बड़ी कुशलता के साथ अप्रत्यक्ष रूप से साहित्य के मूल सरोकार से जुड़ता हुआ कुछ ऐसा कह जाए, जो खेल–खेल में बच्चों की रचना होते हुए भी उसे जीवन–दर्शन अर्थात जीवन की व्यापकता से जोड़ दे।''(3)

नैतिक मूल्य के महत्व को बाल मन में आरोपित करने के उद्देश्य से अनेक बाल साहित्यकारों ने अपनी लेखनी का जादू बिखेरा है।

(1) चन्द्रपालसिंह यादव ''मयंक'' :

नैतिक शिक्षा का जीवन में,
सचमुच है महत्व भारी।
इसे एक स्वर से स्वीकार,
कर रही है दुनिया सारी।

(2) निरंकार देव सेवक :

''माँ मैं सदा सत्य बोलूगाँ।
झूठ बोलने वाले जग में,
आदर मान नहीं पाते हैं।
सत्य बोलने वाले जग में,
गाँधी से पूजे जाते हैं।।''

शोधार्थी, 74-बी, न्याय नगर, सुखलिया, इन्दौर (मध्यप्रदेश)

(3) चक्रधर नलिन :

माता–पिता गुरू भाई की सदा करेंगे सेवा,
नित्य बड़ों का वन्दन करके भर लेंगे मेवा।

(4) डॉ. शकुन्तला कालरा :

''चुभते बोल न जाने तितली
गाये मीठे गाने तितली,
सभी फूल है इसको प्यारे
सबको अपना माने तितली।''

नैतिक मूल्य आधारित रचनाओं में यह बताया गया कि जीवन में इनकी कितनी आवययकता है, इसके अभाव में कोई भी समाज प्रगति नहीं कर सकता है और न ही साहित्य में महानता की भावना का विकास संभव हो पाएगा। माता–पिता तथा गुरूजनों के द्वारा जो कार्य नहीं किया जा सकता, वह सम्पूर्ण कार्य केवल नैतिक मूल्य आधारित रचनाओं से सहजता के साथ संभव है।

कहानी :

बालकों मे नैतिक मूल्य संवर्द्धन की दिशा में कहानी का भी अपना विशेष महत्व है। यह विधा बालकों की अत्यंत प्रिय विधा मानी गई है। जो बालकों का मनोरंजन करने के साथ–साथ रोचकता से पूर्ण होती है। बालकों के ज्ञानार्जन के क्षेत्र में यह अपनी अहम् भूमिका निभाती है। कल्पना बहुलता के साथ यह बाल पाठकों को उत्सुकता पूर्वक बाँधे रखने का सामर्थ्य भी रखती है। बाल मनोवैज्ञानिक तथ्यों से परिपूर्ण कहानियाँ बालकों के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास करती है।

कहानी में सबसे अधिक महत्व उद्देश्य पर दिया जाना चाहिए। हितोपदेश की कहानियाँ एक राजा के राजकुमार को शिक्षा देने के उद्देश्य से रची गई थी।

हितोपदेश के रचनाकार नारायण पंडित के अनुसार, ''जैसे नये घड़े पर बना हुआ चित्रांकन, घड़े के पक जाने पर पक्का हो जाता है, उसी प्रकार बचपन के संस्कार भी पक्के हो जाते हैं।''[(4)]

इसके आधार पर कहा जा सकता है कि बालकों को बचपन में जिस प्रकार के संस्कारों से पोषित किया जाता है, उसी प्रकार के गुणों का विकास उनमें जीवन भर के लिए हो जाता है। अतः विभिन्न साहित्यकारों ने भी अपनी अपनी रचनाओं के द्वारा बालकों के नैतिक मूल्यों के संवर्द्धन की दिशा में एक अभूतपूर्व कार्य करते हुए साहित्य सृजन किया। हितोपदेश की कहानियाँ राजकुमारों को नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण करने के उद्देश्य की पूर्ति करती है।

सर विलियम जॉन्स के अनुसार, ''हिन्दुओं का नीतिशास्त्र अभी तक सुरक्षित है और विष्णु शर्मा की कहानियाँ सबसे प्राचीन नहीं, तो श्रेष्ठतम कहानियाँ अवश्य हैं।''[(5)]

हमारे देश में प्राचीन समय से ही नैतिक मूल्य आधारित कहानियों का प्रचुर मात्रा में बोल–बाला रहा है। विष्णु शर्मा की कहानियाँ जो पंचतंत्र में समाहित है, प्राचीन समय से ही राजा महाराजाओं के पुत्रों के नैतिक मूल्यों के विकास में अपना योगदान देती चली आ रही हैं, जिन्हें संसार की श्रेष्ठतम कहानियों की श्रेणी में रखा गया है।

डॉ. श्रीप्रसाद के अनुसार, महिला रोप्य नाम का कोई नगर रहा हो या न रहा हो, अमर शक्ति और उसके तीन राजकुमार भी हो या न हो, पर विष्णु शर्मा ने भारत के और विश्व के बालकों का महान कल्याण किया है। उन्होंने सभी बालकों को पंचतंत्र के रूप में अनूठी कथा–कृति दी है।''[(6)] कहानियों की विभिन्न अवधारणाओं के द्वारा यह बात भली–भाँति स्पष्ट की जा सकती है कि बालकों के मानवीय मूल्यों के विकास में बाल कहानियों का महत्वपूर्ण योगदान है।

पंचतंत्र की रचनाओं में कल्पनाओं का ऐसा ताना–बाना बुना गया है जो चाहे वास्तविक न हो, परन्तु फिर भी वह आज तक और आने वाले समय में भी मानव मात्र के कल्याण के भाव को प्रसारित करता रहेगा।

नाटक :

नाटक विधा में पात्रों के माध्यम से संवादों का जो मंचन किया जाता है, वह अपने आप में जीवंतता लिए हुए रहता है। नाटक बाल दर्शकों और पाठकों के अन्र्तमन को छूने के सामर्थ्य से परिपूर्ण होता है।

नाटक के महत्व को प्रतिपादित करते हुए महात्मा गाँधी ने अपनी आत्मकथा ''सत्य के प्रयोग'' में लिखा है कि, ''वह अपनी कक्षा में पढ़ाये गए पाठों की बड़ी चिन्ता करते थे।'' उसका एकमेव कारण यही था कि वह नहीं चाहते थे कि कभी कोई पाठ कच्चा रह जाए और उन्हें कक्षा में दण्डित होना पड़े। इस भय के कारण वह अपनी पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त कोई अन्य पुस्तक पढ़ने का विचार ही नहीं करते थे। किन्तु एक बार उनके घर में एक पुस्तक ''श्रवण पितृभक्ति नाटक'' खरीद कर लाई गई। उन्होंने उस पुस्तक को बड़े चाव से पढ़ा और उससे बड़े प्रभावित हुए। बाद में उनके नगर में एक नाटक कम्पनी आई और उसने ''राजा हरिशचंद्र'' का नाटक मंचित किया। उस नाटक ने गाँधीजी के बालमन को बहुत गहराई से प्रभावित किया।

कहानी, कविता व विभिन्न पत्र–पत्रिकायें तो समाज निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, परन्तु यह देखा गया है कि बालक पुस्तकों व पत्र–पत्रिकाओं के स्थान पर टी.वी. व इलेक्ट्रानिक मीडिया से ज्यादा आकर्षित होता है। आज बाजारवाद और उपभोक्तावाद की संस्कृति से बालक भी अछूते नहीं रहे हैं। यही कारण है कि ''हैरी पॉटर'' जैसा उपन्यास आज बच्चों में ज्यादा लोकप्रिय हो रहा है, जिसकी कथा–वस्तु जादू–टोने को आधार बनाकर काल्पनिक रोमांच क़ी प्रस्तुति है। इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण को भी नकार दिया गया है। इसके अलावा आज के बच्चे मोबाइल, वीडियो गेम और कम्प्यूटर की दुनिया से भी इतने अधिक जुड़ते चले जा रहे हैं कि उन्हें पठन–पाठन के प्रति बिल्कुल भी रूचि नहीं रही।

विज्ञान व टेक्नॉलाजी के युग में एक बालक का जन्म विज्ञापन भरे वातावरण में होता है, जिसके कारण मानवीय मूल्यों की घोर उपेक्षा हो रही है। भौतिक सुख–सुविधा के प्रति आग्रह ने आज बच्चों को ऐसे दोराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है, जहाँ उन्हें नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण राजा–रानी व फूल–परियों की कविता, कहानी व प्रसंगों के स्थान पर तलवारों व बन्दूकों से युक्त विज्ञापन परोसे जाते हैं। इस कारण उनका परिवेश घुटन भरा, टूटा हुआ और बिखरा हुआ है। आज न संयुक्त परिवार की परम्पराओं का सम्मान किया जाता है, न दादी–नानी की शिक्षाप्रद कहानियों का वातावरण ही बालकों को मिल पा रहा है। एकल

परिवार में माता–पिता जब एक साथ काम पर जाते हैं, तो बच्चों को या तो आया के भरोसे या क्रेन्च में पलने–बढ़ने के लिए छोड़ जाते हैं। जहाँ स्नेह पूर्ण वातावरण के अभाव में बच्चों में एक प्रकार से असुरक्षा की भावना का वास होने लगता है, जिसके कारण बालकों में प्रेम, सौहार्द्र, ईमानदारी, विनम्रता, दया, करूणा व भाईचारे की भावना जैसे नैतिक मूल्यों का विकास हो पाना बहुत ही मुश्किल हो रहा है।

नैतिकता के मापदण्ड देशकाल के हिसाब से भी बदलते रहते हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बालकों के बहुआयामी विकास के उद्देश्य से डॉ. जयप्रकाश भारती ने बाल साहित्य के विभिन्न आयामों को नया रूप देने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं[7]:

(1) बच्चों की पुस्तकें और पत्रिकायें सुरक्षित रहें, ऐसा कोई केन्द्रीय पुस्तकालय या संग्रहालय कहीं नहीं है। बहुत सा दुर्लभ साहित्य नष्ट हो चुका है और हो जाएगा।

(2) भारतीय भाषाओं की श्रेष्ठ बाल पुस्तकों के अनुवाद अन्य प्रान्तीय भाषाओं में हो और विश्व की प्रमुख भाषाओं में भी उनके प्रकाशन की योजना बने।

(3) सरकार की ओर से बच्चों की पत्रिकाओं को सुविधाएँ तथा संरक्षण मिलना चाहिए।

(4) भारतीय भाषाओं में बाल साहित्य के आदान–प्रदान की कोई सार्थक व्यवस्था होना चाहिए।

(5) बच्चों की कोई भी पांडुलिपि छापने से पहले उसका सम्पादन अवश्य होना चाहिए।

बाल साहित्य सृजन में साहित्यकार को बालमन में उतरकर बालकों को जानना होगा, क्योंकि बालक की जिज्ञासा निस्सीम है, विविध दिशागामी है। आज बच्चों को ऐसा साहित्य आकृष्ट करता है, जो तथ्यपरक, रूचिकर व मनोरंजक होने के साथ–साथ उनकी जिज्ञासाओं को शांत करते हुए उनके ज्ञान की अभिवृद्धि करें। बाल साहित्य में ऐसे विषयों का प्रतिपादन हो, जो नैतिक मूल्यों के रक्षार्थ हो। अर्थात बाल साहित्य बालकों के नैतिक स्तर के साथ–साथ उनकी कल्पनाशीलता को भी नये आयाम देने वाला होना चाहिए। ''जीवन मूल्यों का सृजन भारतीय साहित्य की अपनी विशेषता है, जिसका प्रारम्भ वैदिक काल से ही हो जाता है, जैसे, वाल्मिकी रामायण तथा महाभारत जिसे भारतीय नीति का विश्वकोष कहा जा सकता है।''[8]

निष्कर्ष :

एक बालक को सद्–साहित्य के माध्यम से सुसंस्कारित किया जा सकता है, क्योंकि पंचतत्र, हितोपदेश, बृहत्कथा, मंजरीकथा, सरित सागर, जातक कथाओं आदि का उद्देश्य नैतिक मूल्यों के महत्व को प्रतिपादित करना ही है। एक स्वस्थ समाज की संरचना के लिए नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा बचपन में जरूरी है। इस कार्य हेतु बाल साहित्य की भूमिका अद्वितीय व अतुलनीय है और सदैव बनी रहेगी।

संदर्भ :

(1) पाण्डेय, डॉ.सरोजनी : बाल साहित्य समीक्षा के प्रतिमान और इतिहास लेखन।

(2) पंत, डॉ. मधु : त्रिधारा।

(3) कालरा, डॉ. शकुन्तला : हिन्दी बाल साहित्य विमर्श।

(4) पाण्डेय, डॉ. सरोजनी : बाल साहित्य समीक्षा के प्रतिमान और इतिहास लेखन।

(5) पाण्डेय, डॉ. सरोजनी : बाल साहित्य समीक्षा के प्रतिमान और इतिहास लेखन।

(6) पाण्डेय, डॉ. सरोजनी : बाल साहित्य समीक्षा के प्रतिमान और इतिहास लेखन।

(7) कालरा, डॉ. शकुन्तला : हिन्दी बाल साहित्य विमर्श।

(8) तोमर, जगदीश : नैतिक मूल्य और राष्ट्र बोध।

☸☸

UGC -
APPROVED - JOURNAL

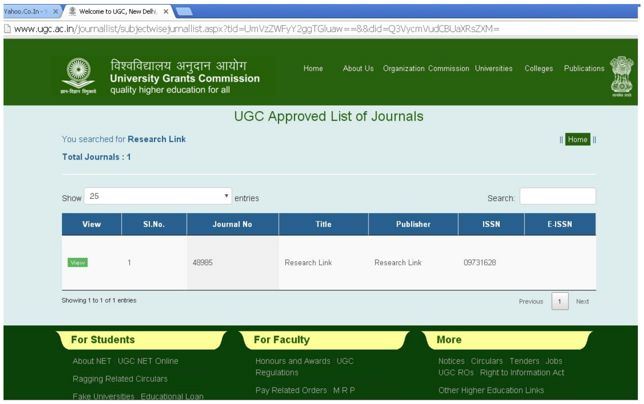

UGC Journal Details

Name of the Journal :	Research Link
ISSN Number :	09731628
e-ISSN Number :	
Source:	UNIV
Subject:	Accounting;Anthropology;Business and International Management;Economics, Econometrics and Finance(all);Education;Environmental Science(all);Finance;Geography, Planning and Development;Law;Political Science a;Social Sciences(all)
Publisher:	Research Link
Country of Publication:	India
Broad Subject Category:	Arts & Humanities;Multidisciplinary;Social Science

Print